वैश्वीकरण,बाजारवाद और हिंदी कविता

डॉ.अलका नारायण गडकरी
हिंदी विभाग,शिवाजी महाविद्यालय कन्नड़
जि. छत्रपति संभाजीनगर (महाराष्ट्र)
ईमेल-alkajadhav9010@gmail.com

सारांश:-

भारतीय इतिहास की 15 अगस्त 1947 तारीख का मतलब अबाल-वृद्ध सभी को मालूम है किंतु 24 जुलाई 1991 का एहसास अभी भी बहुत कम लोगों को है। स्वतंत्रता के 44 साल बाद नई उद्योग नीति की घोषणा हुई, जिसमें एक ऐसे अर्थतंत्र का आकार-प्रकार बनाया गया जो राजनीति को नियंत्रित करने के बजाय उससे नियंत्रित करने की इच्छा से लेंस था। 44 वर्षों के अवधि में जो राष्ट्रीय राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक संस्कृति की रचना हुई वह एक पल में 'ग्लोबलाइजेशन' अर्थात भूमंडलीकरण में तब्दील कराई गई। दूसरे शब्दों में कहे तो यही से भारत के वैश्वीकरण की शुरुआत थी। इस घटना को अनेक संज्ञाओं से जाना जाता है। जैसे कि जगतीकरण, वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण,ग्लोबकरण, विश्वायन, पूंजीवाद,सर्वव्यापकीकरण आदि । इस घटना के पक्ष विपक्ष में राजनीतिक दल, जन पक्षियआंदोलक, पिछड़ी जातियों, महिलाओं,गरीबों और दलितों के हितचिंतक, मार्क्सवादी, आधुनिकता के आलोचक,अधिकारी, गांधीवादी और पर्यावरणवादियों ने अपनी राय बनाई। साहित्य भला इस घटना से अछूता कैसे रहेगा? साहित्यकारों ने भी इस परिघटना से प्रभावित होकर साहित्य सृजन किया है।

साहित्यकार समाज, राजनीति, अर्थ,संस्कृति तथा समाज में घटित हर घटना का चित्रण हर विधा में करता है। इसमें कविता अन्य साहित्यिक विधाओं की तुलना में अधिक संप्रेषणीय है। क्योंकि कम शब्दों में अधिक असर करने की क्षमता उसमें होती है। स्वतंत्रता आन्दोलन में कवियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।भारत विविधतापूर्ण देश है। सांस्कृतिक वैशिष्ट्य इस विविधता में ही निहित है। भारत की संस्कृति एक सांझी संस्कृति है। भूमंडलीकरण ने विश्व ग्राम का सपना देकर संपूर्ण विश्व को एक बनाने का संकल्प किया। लेकिन भूमंडलीकरण में एकल संस्कृति दिखाई देती है। जो कि पाश्चात्य संस्कृति है। जिसका भारतीय सांझी संस्कृति से कोई तालमेल नहीं है। यह संस्कृति उपभोग पर आधारित बाजारवादी है। आर्थिक उदारीकरण को स्वीकार करने के बाद डेढ़ दशक के भीतर पूरे देश में वैश्वीकरण के दुष्प्रभाव सामने आने लगे। समाज के निम्न एवं मध्य वर्ग इसकी चपेट में आ रहे हैं। वर्ग-भेद गहराता जा रहा है। कुछ लोगों के पास धन संपत्ति इकट्ठा हो रही है, तो कुछ लोग दो वक्त की रोटी जुटाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। मनुष्य के आजीविका उत्पादन के क्षेत्र ध्वस्त हो रहे हैं। सत्ता वर्ग विकसित भारत का विज्ञापन देकर संतुष्ट है।उपनिवेश के दौर में संस्कृति के सारे अंग खतरे में पड़ते हुए नजर आ रहे हैं। पाश्चात्य संस्कृति से माफिया संस्कृति को बढ़ावा दिया जा रहा है।

विस्तार:-

आधुनिक हिंदी कविता नव उपनिवेश की सच्चाई से वाकिफ है। उपनिवेश का नवागमन देश की आजादी का खात्मा कर रहा है। इसमें धर्म के सिवाय कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं है। लोकतंत्र में जनता का

जो महत्व है वह खोता हुआ महसूस हो रहा है और धनतंत्र स्थापित किया जा रहा है। चुनाव एवं जनतंत्र संस्थाएं स्वतंत्रता का प्रतीक है किंतु वैश्वीकरण के दौर में हर कहीं धनपतियों की पकड़ मजबूत होती हुई दिखाई देती है। आज देश की संसद एवं विधानसभाओं में करोड़पतियों का वर्चस्व है, धन केंद्रित व्यवस्था ने जनतंत्र को खोखला कर दिया है। विदेशी आर्थिक नीतियों का यह परिणाम है। वर्तमान स्थिति में समाजवाद महज सपना हो गया है। कवि ऋतुराज इस संदर्भ में लिखते हैं, "लिख सकते हो क्या धनलिप्सा के प्रदर्शनकारी मंडप के समाजवाद की पूर्णाहुती के बारे में।"[1] संपत्ति मध्य मार्ग को लुभावने स्वप्न देकर स्वप्निल विश्व ग्राम में फसाने का कार्य हो रहा है।आर्थिक उदारीकरण के समर्थकों का कहना है। देश प्रगति की दहीलीज पर ही नहीं उंचाई को छू रहा है। शहरी बाजार में दिखाई देने वाली चीजों की बाढ़ इसका आधार है। गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी से लोग त्रस्त है।"हर कोई हर कदम चौंकता है/यह कैसी रोशनी है जिसमें हर चीज की परछाई अंधेरे की तरह गिरती है यह कैसी रोशनी है जिसमें पहचान में नहीं आता कोई चेहरा सिर्फ परिछाई -सी दिखती है।"[2] शासक वर्ग अपने भाषण बाजी और बयानों में विकास का भ्रम पैदा कर रहा है। प्रौद्योगिकी को विकास का मापदंड माना जाता है। इसलिए खेती बारी, लघु उद्योग आदि को दरकिनार कर, करोड़ रूपयों की लागत से आईटी पार्क बनाए जा रहे हैं। अंधाधुंध मशीनीकरण से जंगल ,पहाड़, खेत, नदी, आदि प्राकृतिक संरचना को नष्ट करने के कारण धरती का संतुलन बिगड़ रहा है। इससे ऋतुओं में परिवर्तन हो रहा है। और असमय बारिश, सुखा, ठंड जैसी प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि हुई है।

वैश्वीकरण को आधुनिक कवि एक सांस्कृतिक आक्रमण की दृष्टि से देखते हैं। साम्राज्यवादी शक्तियां विशिष्ट प्रकार की प्रणालियों से दूसरे देशों की जनता को अपना गुलाम बना रही है। अनुकरण भ्रम हमें पाश्चात्य संस्कृति में फंसा रहा है। कवि उमाशंकर चौधरी अपनी कविता 'तुम्हारी अपनी संस्कृति'में लिखते है,"बोतल बंद पानी पीकर उसे बोतल को क्रश देते हो क्योंकि तुम्हें याद है वह निर्देश क्रश द बॉटल आफ्टर यूज।.. पर क्या तुम्हें पता है। इस तरह फसते-फसते विचार के मद में उसे बोतल की तरह तुम भी धीरे-धीरे रिक्त होते जा रहे हो और जिस दिन तुम पूरी तरह रिक्त हो जाओगे तुम भी खाली बोतल की तरह/बगैर कोई निर्देश के क्रश कर दिए जाओगे"[3] बाजरीकरण की उपभोक्तावादी संस्कृति के पीछे दौड़ने वाली पीढ़ी को कभी सजग करते हुए यथार्थ से रू-ब-रू करता है।

वैश्वीकरण का मूलमंत्र उदारीकरण, निजीकरणऔर बाजारीकरण है। बाजार का लक्ष्य मुनाफा है। मुनाफे के लिए मनुष्य आत्मीय संबंधों को भी खत्म कर रहा है। जहां लाभ नहीं वहां कोई संबंध भी नहीं। ऐसी स्वार्थी वृत्ति विकसित हुई है। वैश्वीकरण की बाजारवादी व्यवस्था के कारण। मानवीय मूल्य तहस नहस हो रहें हैं। "हवा और पानी पहले भी कुछ ना कुछ दुषित थे लेकिन जब से खुले बाजारों की हवा बही तेजी से तब तो मूल्य ने पूरी तरह आचार व्यवहार बदल दिए हैं[4] मानवीय संबंध गहरे संकट में पड़ गए हैं। रिश्तो से आत्मीयता खत्म हो चुकी है। संपत्ति के लिए भाई भाई की हत्या कर रहा है। मां-बाप भी बोझ लगने लगे हैं उन्हें वृद्ध आश्रम का रास्ता दिखाया जा रहा है। उच्च शिक्षित होकर बड़े ओहदे पर नौकरी करवाती यह पीढ़ी मां-बाप के मरने पर अत्यं दर्शन भी इंटरनेट के द्वारा ले रही है। मनुष्य जीवन की इससे बड़ी दुर्घटना और क्या हो सकती है? विश्व ग्राम में तब्दील हो गया है और घर

के व्यक्ति एक दूसरे से अपरिचित अनजान दिखाई दे रहे हैं। काल की महिमा से प्रेम भी वैश्वीकरण में गिरता हुआ दिखाई दे रहा है।

वैश्वीकरण का सबसे अधिक असर मध्यवर्ग और निम्न वर्ग झेल रहा है। उनकी छोटी सी रोजदारी भी बाजार ने छीन ली है। घर बैठे बाजार उपलब्ध होने के कारण उन पर भूखे रहने की नौबत आयी है। कुमार अंबुज लिखते हैं, "गरज यह है कि पूरा बाजार सामान और खरीदारी से इस कदर दमक रहा था कुछ इस तरह व्यस्त था की दिन की आखिरी घड़ी में ग्राहक खोजता हुआ कोने में बैठा हुआ मोची हास्यास्पद हो गया था जो बार-बार अपने हाथ में घूम रहा था पॉलिश की डिबिया और सस्ते बिस्किट-गोलियां बेचती उसे बुढ़िया ने तो समेट ही लिया था अपना खोखा[5] ऑनलाइन खरीदारी और मॉल संस्कृति के कारण छोटे-मोटे दुकानदारों को बदहाली का सामना करना पड़ रहा है तो दूसरी ओरलगातार इजाफा होता जा रहा की भीड़ में कीमतें बढ़ती जा रही उसी अनुपात में और कहीं कुछ कमी नहीं है रोशनी करेला देखते हुए मैंने सोचा कि बाजार में नहीं किसी मेले में आया था अब हम बाजार में जरूरी चीजे खरीदने के लिए नहीं बल्कि मौज मस्ती की चीजें लेने के लिए जाते हैं। वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप हमारी जरूरत ही बदल गई है।

आर्थिक उदारीकरण से पहले देश के पहले हमें कर्ज लेने हेतु बैंक के चक्कर काटने पड़ते थे अब बैंक वाले ग्राहक के ऑफिस में आकर कर्ज लेने के लिए आग्रह करते हैं। देश के आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए विश्व बैंक, एडीबी(एशियाई विकास बैंक) जैसी संस्थाएं काम कर रही है। साम्राज्यवादी शक्तियां चाहती है कि हम कर्ज लेकर उनके सामने झुके रहे कर्ज के बोझ तले दबे रहे।" छुपा है यह सूद मूल के भीतर सूद पोता है/लड़के से भी अधिक प्यारा/अगली पीढ़ी में ले जाएगा कर्ज को यही"[6] वैश्वीकरण में पल-पल बढ़ रही इस पीढ़ी को सुख सुविधापूर्ण जीवन चाहिएं। सब कुछ कर्ज से मिल रहा है। देश के साथ आदमी भी कर्ज में डूबता जा रहा है। इतना ही नहीं तो बहुराष्ट्रीय कंपनियों को पूंजी निवेश के नाम पर छूट मिल रही है देश की संपत्ति लूटने को। जल, जमीन, जंगल, खेती-बाड़ी पर कब्जा हो रहा है। मुआवजे में थोड़ा रुपया पैसा देकरएक दिन ऐसा ही पकड़ा दिया जाएगा उसे मोदी की रकम भारत एक और चेक और वे हो जाएंगे बेदखल इस खेत से, इस आड़ से और सबसे पहले/किस शब्द से"[7] भारत कृषि प्रधान देश है,किसान इसकी आत्मा है लेकिन उसे ही अपनी है अस्मिता से वंचित किया जा रहा है। इसका प्रतिरोध करने के लिए हमें स्वदेशी चीजों का इस्तेमाल करना होगा। कवि उदय प्रकाश कहते हैं"बचना ही है तो बचाए जाने चाहिए गांव के खेत जंगल के पेड़,शहर में हवा, पेड़ों के घोंसले/अखबारों में सच्चाई राजनीति में नैतिकता, प्रशासन में मनुष्यता दाल में हल्दी क्या कुम्हार, धर्मनिरपेक्षता और एक दूसरे पर भरोसे को बचाने के लिए नहीं किया जा सकता संविधान में संशोधन"[8] स्वतंत्रता के बाद आज तक संविधान में बहुत सारे संशोधन हुए हैं लेकिन मानवतावाद कायम रखने के लिए संशोधन जरूरी है ।

निष्कर्षत:

वैश्वीकरण के प्रभाव से समाज का हर क्षेत्र को प्रभावित हुआ है।आर्थिक विषमता फैल गई है।उदारीकरण के कारण अमीर और अमीर होता गया, जबकि गरीब और अधिक गरीबी के दलदल में धंसता चला गया । पूंजीपतियों की संपत्ति में भारी इजाफा हुआ है, लेकिन बेरोजगारी और भुखमरी की

समस्या भी उसी अनुपात में बढ़ी है ।प्रकृति का दोहन हो रहा है।अंधाधुंध मशीनीकरण और आईटी पार्कों के निर्माण ने जल, जंगल और जमीन जैसी प्राकृतिक संपदा को भारी नुकसान पहुँचाया है । इसका परिणाम ग्लोबल वार्मिंग, असमय वर्षा और सूखे के रूप में हमारे सामने है ।सांस्कृतिक ह्रास बड़े पैमाने पर हो रहा है।समाज पर 'उपभोगवाद' की संस्कृति हावी हो गई है। मानवीय संबंधों का आधार अब 'आत्मीयता' न रहकर 'बाजार मूल्य' बन गया है । पाश्चात्य प्रभाव के कारण 'उपयोग करो और फेंको' (Use and Throw) की प्रवृत्ति बढ़ी है । साहित्य समाज का दर्पण होता है। इसलिए समाज की गतिविधियों का अंकन उसमें किया जाता है।हिंदी कविता में वैश्वीकरण और बाजारवाद का चित्रण बखूबी किया गया है। कविता अपनी संप्रेषणशीलता इन परिवर्तनों को बड़ी गहराई व्यक्त करती है।कवि ऋतुराज की पंक्तियों के माध्यम से यह दिखाया है कि कैसे बाजार में व्यक्ति की कीमत उसकी योग्यता से ज्यादा उसकी 'बिकने की कला' पर निर्भर करती हैं।देश प्रगति कर रहा है, लेकिन वास्तविकता यह है कि यह प्रगति केवल वस्तुओं की चकाचौंध तक सीमित है । मानवीय मूल्यों और पर्यावरण की बलि देकर प्राप्त की गई यह उन्नति आत्मघाती सिद्ध हो रही है। हिंदी कविता इन विसंगतियों को पहचानकर समाज को निरंतर सचेत कर रही है।

संदर्भ सूची :

1) आशा नाम नदी- ऋतुराज-पृष्ठ क्र- 17

2) क्रूरता -कुमार अंबुज-पृष्ठ 68

3) कहते हैं जब शहंशाह सो रहे थे-उमाशंकर चौधरी पृष्ठ क्रमांक 64-65

4) ऐसी कैसी नींद -भगवत रावत-पृष्ठ क्रमांक -28

5) क्रूरता -कुमार अंबुज पृष्ठ क्रमांक 26

6) शब्दपदीयम -बद्री नारायणपृष्ठ क्रमांक 48

7) कहते हैं तब शहंशाह सो रहे थे- उमाशंकर चौधरी- पृष्ठ क्रमांक 49

8) रात में हारमोनियम -उदय प्रकाश पृष्ठ क्रमांक -22

• **Copyright & License:**
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.